ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-6* July- 2020
Innovation The Research Concept

लोकभाषा व लोकगीतों का अध्ययन : नंगातलाई गाँव के विशेष संदर्भ में

Study of Lingua Franca and Folklore: With Special Reference To The Village of Nangatlai

Paper Submission: 00/00/2020, Date of Acceptance: 00/00/2020, Date of Publication: 00/00/2020

ज्योति शर्मा
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश

लोक का सामान्य अर्थ है आम आदमी, जिसकी व्यक्तिगत पहचान न होकर सामूहिक पहचान है। लोकगीत का सामान्य अर्थ है लोक में प्रचलित गीत, लोक रचित गीत, लोक विषयक गीत ही लोकगीत है। लोक में रचने की अद्भुत क्षमता पाई जाती है। लोकगीतों का रचयिता कोई व्यक्ति नहीं होता, लोक समुदाय ही लोकगीतों की रचना करते है। लोकगीत प्रकृति के उद्गार है। लोकगीतों में मानवीय सुःख दुःख की स्वाभाविक अभिव्यक्ति होती है लोकगीत छंद के बंधनो से दूर, सहज स्वाभाविक रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानान्तरित होते रहे है। लोक भाषा का सामान्य अर्थ है लोक में प्रचलित भाषा, लोक जिन शब्दों के माध्यम से अपनी भावाभिव्यक्ति करते है वहीं लोकभाषा है। ''नंगातलाई का गाँव'' स्मृति आख्यान में लेखक ने भूमिका में ही स्वीकार किया है कि यह पुस्तक मेरे गाँव के बारे में है। लोकभाषा, लोकगीत, लोककथा, खानपान, वेशभूषा एक क्षेत्र विशेष की लोकसंस्कृति लोकभाषा, लोकगीत त की पहचान करवाते है। किसी भी राष्ट्र या समाज को उसके मूलरूप में समझना है तो लोक को समझना आवश्यक है।

Lok means the common man, who has a collective identity rather than a personal identity. Folklore generally means folk songs, folk songs, folk songs are folk songs. The amazing ability to create is found in folk. No person is the author of folk songs, folk communities create folk songs. Folklore is the origin of nature. Folk songs are a natural expression of human unhappiness. Folklore has been naturally transferred from generation to generation, away from the shackles of verses. The common meaning of the folk language is the language prevalent in the world, the words through which people express their speech, is the lingua franca. In the "Nangatlai Ka Gaon" Smriti Sankhya, the author has accepted in the role that this book is about my village. Folklore, folklore, folklore, food, costumes identify the folklore, folklore of a particular region. To understand any nation or society in its original form, it is necessary to understand the people.

मुख्य शब्द : लोकभाषा, लोकगीत, लोक गाँव, बिस्कोहर, नैसर्गिक, सहज स्वाभविक, लोकसंस्कृति ।
Folk Language, Folklore, Folk Village, Biscohar, Natural, Naturalistic, Folk Culture

प्रस्तावना

लोकभाषा व लोकगीतों की चर्चा से पहले लोक को जानना आवश्यक है। लोक का सामान्य अर्थ है आम आदमी अर्थात् सर्वत्र नजर आने वाला किन्तु अनाम व्यक्ति बिना किसी खास पहचान के किन्तु हर किसी में देखी जाने वाली अनेक पहचानो को अपने समेटे वह जन है वह लोक है। लोक का अभिप्राय सर्वसाधारण जनता से है जिसकी व्यक्तिगत पहचान न होकर सामूहिक पहचान है। जो आधुनिक सभ्यता की चमक दमक से दूर परम्परागत तरीके से जीवन जी रहा है।

डॉ. सत्येन्द्र के अनुसार लोक "लोक मनुष्य समाज का वह वर्ग है जो आभिजात्य संस्कार, शास्त्रीयता और पांडित्य की चेतना अथवा अंहकार से शून्य है और एक परम्परा के प्रवाह मे जीवित रहता है। ऐसे लोक की अभिव्यक्ति में जो तत्व मिलते है वे लोकतत्व कहलाते है''[1]

किसी भी राष्ट्र या समाज को उसके मूलरूप में समझना है तो उसके लोक को समझना होगा। लोक अपने को बेबाकी से अभिव्यक्त करने की क्षमता रखता है जब उसकी अभिव्यक्ति गायन के रूप में होती है तो लोकगीत बन जाती है। कथात्मक रूप में होती है तो लोककथा बन जाती है और जब यह अभिव्यक्ति चित्रात्मक रूप में होती है तो लोककला बन जाती है। लोकगीत, लोककला, लोककथा अपने अंदर सहस्राब्दियाँ की अनूठी दास्तान सहेजे है। अगर इन्हें विश्लेषित किया जाए तो ये एक जीवन्त दस्तोवज के रूप में हमारे काम आ सकती है।

लोकगीत

शब्द का अर्थ है (अ)लोक में प्रचलित गीत।
(ब)लोक रचित गीत।
(स)लोक विषयक गीत।

सामान्यत : लोक में प्रचलित, लोक द्वारा रचित व लोक के लिये लिखे गये गीतों को लोकगीत कहा जा सकता है। लोक में रचने की अद्भुत क्षमता पाई जाती है। यहाँ खेत जोतते हुए किसान, पनघट से पानी भरती स्त्रियाँ, चक्की से आटा पीसती हुई महिलाये भी गीतों की रचना कर देते है। लोक गीत का रचयिता कोई व्यक्ति नहीं होता है, लोक समुदाय ही लोकगीतों की रचना करते है। और ये पीढ़ी–दर– पीढ़ी चलते रहते है। लोकगीतों का कोई लिखित साक्ष्य नहीं है। यह तो निरन्तर प्रवहमान धारा है जो अपने अकृत्रिम रूप में बहती रहती है। लोकगीत प्रकृति के उद्गार है। आधुनिक तड़क भड़क से दूर पारदर्शी शीशे की तरह स्वच्छ है। सरलता, रस, माधुर्य और लय इनके गुण है। लोकगीतों की असली दुनिया शहरी चमक दमक से बहुत दूर है। हमेशा से लहराते खेत, सरिता का मीठा संगीत, कोयल का पंचम राग, और बरसने से पूर्व मेघों का गर्जन तर्जन आज भी मानव हृदय के लिये प्रेरणा की वस्तु बने हुए है। मानव जाति की विराट भाव व्यंजना इन गीतों की हर कड़ी पर जागृत है। जन्म पर सोहर और जच्चा के गीत, विवाह पर बन्ना बन्नी, हल्दी आदि के गीत, जनेऊ के गीत, परदेश गमन पर गीत, आगमन पर गीत, और यहाँ तक कि मृत्यु पर भी गीतों का गाया जाना एक रिवाज के रूप में मिलता है।

रामनेरश त्रिपाठी ने लोकगीतों के बारे में लिखा है–''जैसे काई नदी किसी घोर अंधकारमयी गुफा में से बहकर आती हो और किसी को उसके उद्गम का पता न हो, ठीक यही दशा लोकगीतों के बारे में विद्वान् मनीषियों ने स्वीकारी है''।

डॉ. सत्येंद्र ने लोकगीतो के बारे में कहा है–''वह गीत जो लोकमानस की अभिव्यक्ति हो, अथवा जिसमें लोक मानसाभास भी हो लोक गीत के अर्न्तगत आयेगा''2

लोकगीत जैसे एक ''देवी वाक्य'' है जिसका न कोई निर्माता है न स्वर संघाता। वह मानव समुदाय में सहज ही स्वयं उद्धरित हो उठा है, और बिना प्रयास के सहज ही कण्ठ से कण्ठ पर उतरती हुई परम्परा स्थापित करता रहा है। लोकगीत अपनी विकास परम्परा के देश काल से प्रभावित होकर उसके तत्वों को ग्रहण करता हुआ, फिर प्रवृतितः उन देशकालों के प्रभावो का संक्रमण करता हुआ, उनकी उपेक्षा करता हुआ, अपनी मूल मानवीय संवेदनाओं को समाहित कर अपनी परम्परा और निरन्तरता बनाता है।

कभी–कभी ऐसे लोकगीतों के निर्माण में यह भी होता है कि एक व्यक्ति आरम्भ करता है, और दूसरा या तीसरा भी उसमें कड़ी जोड़ देता है और वह कड़ी या कडियाँ भी उस मूल गीत की अपनी बनकर परम्परा में चल पड़ती है। संगीत की स्वर साधना शास्त्रीय मानसिकता से जैसे आक्रान्त रहती है वैसे लोकगीत की नहीं। लोकगीत में संगीत की भॉति स्वर को आरोह अवरोह, सरगम और स्वर, लय ताल में नहीं बाँधा जा सकता, लोकगीत का ताल और लय आरोह–अवरोह, संवृत्ति–विवृत्ति, समस्त बंधन स्वाभाविक मनोवेगों के अनुकुल ढ़लता है। लोकगीत को गाने वाले गायक पिंगल (छन्द) के नियमों का पालन नहीं करते। वे अपनी सुविधा के अनुसार गाने के लिए कहीं ह्रस्व स्वर को दीर्घ और कहीं दीर्घ स्वर को ह्रस्व कर दिया करते है। लोकगायक बडी मस्ती में इन गीतों को गाते है और गाते समय अपनी सुध बुध भी भूल जाते है।

डॉ.सत्येन्द्र के अनुसार लोकगीतो के प्रकार[3] डॉ. सत्येन्द्र ने निम्नलिखित आधारों पर लोकगीतों का वर्गीकरण किया है–(अ) क्षेत्र की दृष्टि से
(ब) जातीय दृष्टि से– विभिन्न जातियों के गीत
(स) अवस्था भेद से– बच्चों, नोजवानों, बूढों के
(द) योनि भेद से–पुरूषो, के स्त्रियों के
(य) उपयोगिता की दृष्टि से
(र) वस्तु भेद से
(ल) रूप भेद से–प्रबन्ध, मुक्तक
(व) प्रकृति भेद से।

1. क्षेत्र की दृष्टि से लोकगीतों का वर्गीकरण

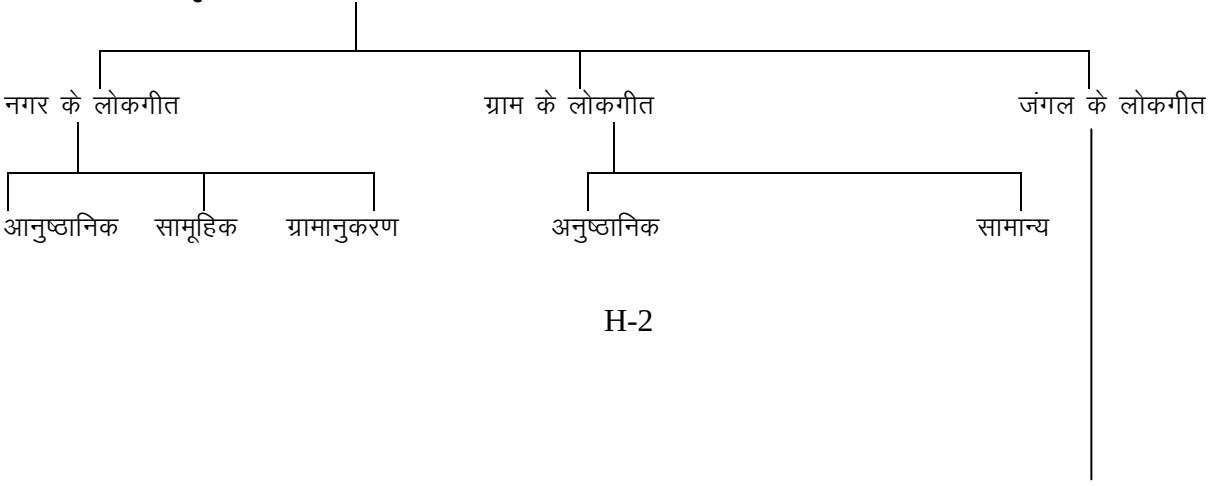

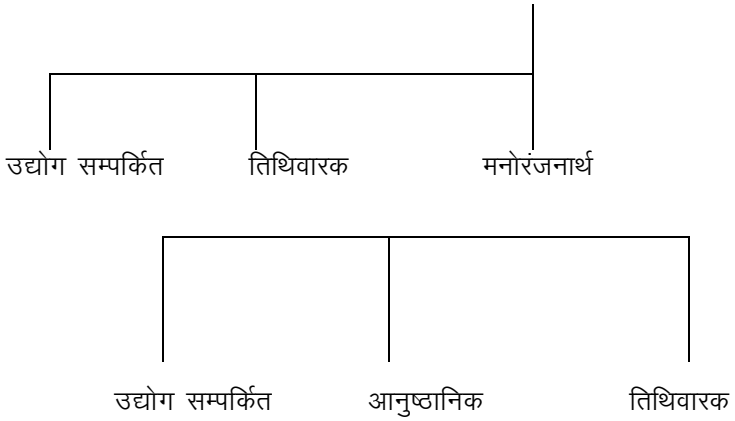

2. उपयोगिता की दृष्टि से वर्गीकरण

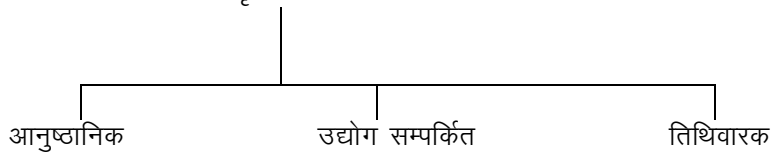

3. वस्तु भेद से– गीतों के किस प्रकार की विषय वस्तु आई है के आधार पर–

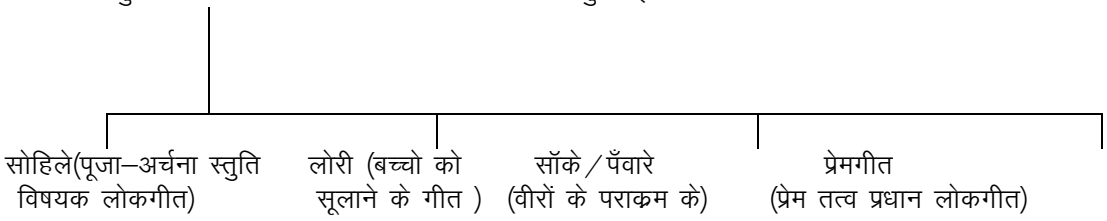

4. प्रकृति भेद से :–

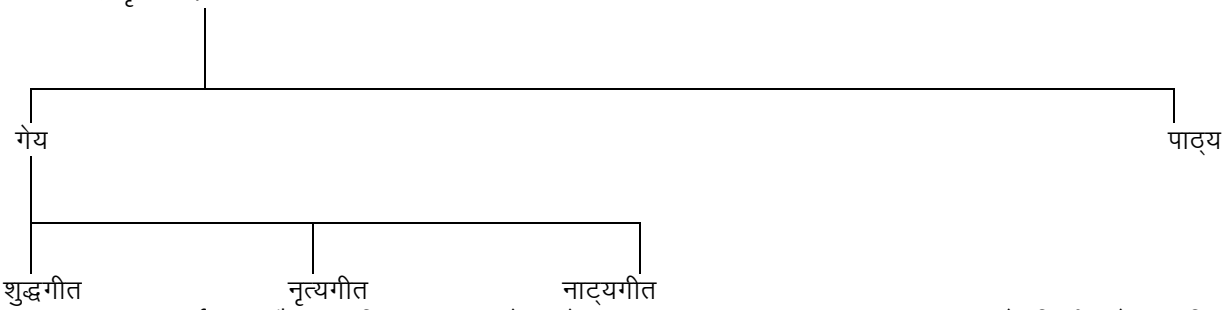

''नंगातलाई का गाँव'' स्मृति आख्यान में आये लोकगीतो को देखते है :–

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी एक प्रगतिशील आलोचक के रूप में ख्यात है। आपका स्मृति आख्यान ''नंगातलाई का गॉव'' (2004) की भूमिका में आपने स्वीकार किया है कि ''यह किताब मेरे गाँव के बारे में है''[4] लेखक का गाँव उत्तर प्रदेश बस्ती जिला (अब सिद्धार्थ नगर) में है बिस्कोहर, बिस्कोहर हिमालय की तलहटी में बसा हुआ तराई का क्षेत्र है। यहाँ लेखक ने उत्तर प्रदेश में गाये जाने वाले लोकगीतो का वर्णन किया है।

बिस्कोहर एक छोटा सा गॉव था पर स्वतंत्रता आंदोलन से अछूता नहीं था। 1940–41 में फौंज मे रंगरूटों की भरती के लिये प्राइमरी स्कूल के पास वाले बाग में सभा हुई। 1857 के गदर में कम्पनी की फौज का तम्बू वहॉ लगा वहॉ इस सभा में किसी लोक कवि का गया गया गीत–

''मेरे बांके सैयाँ
बन जा तू अब रंगरूट
हियाँ जुरै नहिं फटही पनहीं
हुऑ तू डटबौ बूट_ _ _ _मेरे बाँके सैयाँ''[5]

पण्डित जगदम्बा प्रसाद पाण्डेय 'जगेश' जो पुरूष टोला पंडितों मुहल्ले में रहते में उन्होनें भी एक कविता सुनाई–

''है हम वशंज अर्जुन भीम के
शत्रुओ को भली भॉति जताना
जीत मिलें विक्टोरिया क्रास
मरै पै मिले बैकुण्ठ बिमाना!

बिस्कोहर की संस्कृति को बिना **मर्सिये** के नहीं समझा जा सकता। पच्छूँ टोले की बेड़िने मर्सियॉ गाती थीं

माने जंवार गाँव में सबसे अच्छा मर्सिया गाते थे। मरसिया अवधी लोकगीत के रूप में गाया जाता है।
जैसे चनैनी, आल्हा गाया जाता है। करूण संगीत का प्रतिमान है मरसिये।
''कडिक् काका कडिक् काका झैयम् झैयम्''

विसनाथ की दादी मरसिहा नहीं ''दाहा' गाती थी "अबको गावा कब अइहौ रे हाय हाय"

दाहा मुहर्रम में गाया जाने वाला एक और करूण गान रूप है।

दीपावली के अवसर पर गाये जाने वाला लोकगीत–

करवा करवारी। ओकरे बरहें दिया दिवारी।
दिवारी बैठी कोनें तब आग लाग डिठौने''।

डिठौने थानी देवोत्यान का पर्व जिस दिन सबेरे गाया जाता है।

''ईसरी आवै दरिद्री जाएँ'' ईसरी अर्थात् ऐश्वर्य और दरिद्री यानी दारिद्रय। यह लक्ष्मी पूजन के अभिप्राय का द्योतक है।

दीपावली के दो चार दिन एक मंनोरजन पर्व ''हड़ा हड़वाई'' होता है जिसमें रात को रस्सी के सिरे पर कपड़ा बाँधकर उसे तेल में डुबो देते फिर उसमें आग लगाकर उसे दोनों हाथों से चारों तरफ घुमाते।

घुमाने के साथ–साथ गाते– ''हड़ा हड़ावाई। मधवक दाई करैं सगाई **6
(हड़ा हड़वाई। माधव की पिता मही शादी कर रही हैं)
इस गीत का संबंध मुहल्ले में रहने वाले सबसे अधिक वय वाली वृद्धा भगवंता दाई से था।

''लाल–लाल बरिया पातर पना।
चीखो भगंता दाई कैसन बना''[6]

(लाल रंग के बड़े है पतला पना है। भगंवता दाई चखकर बताओ कैसा बना है।)

पहले मंनोरंजन के साधन नहीं थे लोक में गांकर, बजाकर ही मंनोरंजन किया जाता था। आधुनिक सभ्यता के प्रसार के साथ ही मंनोरंजन के साधनों का भी प्रसार होता गया जब लोक की जीवन पद्धति ही संकट में है तो लोकगीतों कैसे बच सकते है।

लोक में विशेष त्यौहार के लोकगीत होते है–
बकरीद के दिन सूसे काका द्वारा गाया गया गीत –

ईंद बकरीद, शुबेरात भारी,
हिन्दुन कै झाँ_ _ _ मुसलमान कै दाढी[7]

इसके प्रत्युत्तर में लाल कुँजड़े भी आता था–

ईंद बकरीद, शुबेरात भारी,
हिन्दून कै गाँ_ _ _ मुसलमान ने मारी[7]

बिसनाथ ने डूडू बाबा से यह गाना सुना है =

मनइन मइहन नउवा देखा औ पंछिन माँ कउवा,
नदी किनारे झव्वा देखा, नव्वा, कव्वा, झव्वा
कबीरा भाई तीनुम ताल लगाई।

लोक में एक विशेष रचनात्मक क्षमता पाई जाती है कि वे काम करते हुए ही गीतों की रचना कर लेते थे बिसनाथ की अम्मा अक्सर दोहराती रहती थी–

''चन्दन पड़ा चमार घर नित उठि कूटै चाम
चन्दन बिचारा क्या करै पड़ा नीच से काम''

बिसनाथ की अम्मा पिता के आलसी स्वभाव से परेशान होकर गुनगुनाती रहती – ''कर्म कमण्डल कर गहे कंचन बरसे मेह
माथे छात्र दरिद्र का बून्द न पड़े सरीर''

''नंगातलाई का गाँव'' मे आई विशेष लोकभाषा को देखते हैः–

लोकभाषा से आशय है लोक मे प्रचलित भाषा या लोक की भाषा, जनसामान्य की भाषा, यहां हम लेखक के गाँव बिस्कोहर जो पूर्वी उत्तर प्रदेश में स्थित है। अतः पूर्वी उत्तर प्रदेश में प्रचलित लोकभाषा व लोक मे प्रचलित विशेष शब्दों से परिचित होगे।

लीलाधर मंडलोई जी ने ''नंगातलाई का गाँव'' स्मृति आख्यान की समीक्षा करते हुए भाषा के बारे में लिखा है कि ''इस कालजयी आख्यान में लोक सौन्द्रर्य के स्वाभिमान में पगी ऐसी सजल भाषा है जो शोख, तीखी, मीठी, चोट खाई, लचीली और विदग्ध है। शब्द यहाँ अदेखी अनुठी भंगिमाओं मे अर्थो का नया संसार रचते है। शब्दों की विपन्नता के रूदन के बीच यह किताब एक ऐसे आधार ग्रंथ की तरह है जिसमें पूरबी अवधी का अजाना समृद्ध भाषा संसार है।''

डॉ. नगेन्द्र ने विश्वनाथ त्रिपाठी के नंगातलाई का गाँव'' के बारे में कहा है कि ''त्रिपाठी जी ने ''नंगातलाई का गाँव'' के संस्मरणों मे अपने गाँव पर ही अपने को केन्द्रित कर लिया है''[8]

इसमें लेखक प्रारम्भ से लेकर आजादी के बाद तक की घटनाओं का आलोचनात्मक दृष्टि से वर्णन किया है।

बिस्कोहर मे एक विशेष प्रकार का वाक्दोष प्रचलित था–
लोक अक्सर 'स' को 'फ' बोलते थे– बिस्कोहर बाजार फे हमको गैफड़ी टेफन जाना है''[9](बिस्कोहर बाजार से हमको गैंसडी टेशन जाना है) इस तरह स को फ बोलते थे। बिस्कोहर का क्षेत्रीय वाक्दोष था। बिस्कोहर मे जो थोड़े पढे लिखे थे वे अपनी पहचान खड़ी बोली बोलना और बिन्दी लगाकर बोलना होती थी। हर जगह बिन्दी लगाकर बोलते थे, स को श बोलते थे–

''इलाहीं दूनो आँखों मे बशे जल्वा मोहम्मद का[10]
(इलाही दोनों आँखों में बसे जलवा मोहम्मदका)

बिस्कोहर में विकलांग व्यक्ति को, खास तौर पर काने को =डिप्टी साहेब, कलक्टर साहेब, कप्तान साहेब या थानेदार साहेब कहा जाता था''
कोई लगंडा है तो उसे कहेंगे =ऊ जों नव्वाब साहेब।
बस कण्डक्टर को कण्डेवर, ड्राईवर को डेवर,
गाली निकालने को मुसलिम समाज में कहते –ये कैसा कच्चा कलाम बोल रहा है।
तू कहाँ जात हो को कहेंगे =तू करमहाँ जारमात हरमओं।
हम अपने घर जाते है को कहेगें =हरमम अरपने घम्मरे जारमाते हरमहै।
कहाँ जात हौ तो कहेंगे =सातमिस सातमिस सौमिस
तुम्हारी धौती खुली है तो को कहेंगे =सोहर मिस सोतीमिस, सुली मिस सहमिस।

झुठी दिलासा या सान्त्वना देने पर कहेगे =चुपाये रहो दुलहिन माराजाई कउवा

अब हम बिस्कोहर में प्रचलित विशेष लोक शब्दों से परिचित होते है जो बिस्कोहर को अन्य क्षेत्रों से अलग विशिष्टता प्रदान करते है, ये शब्द बिस्कोहर के आसपास ही प्रचलित है– अन्य क्षेत्रो के लोग इनका अलग ही अर्थ निकाल लेगे या अर्थ नहीं समझ पायेंगे–

1. सगरा– दक्खिन मे एक विशाल तालाब पूरे बाजार के आकार के सामांतर फैला था जिसे सगरा कहा जाता है।
2. मेघा में तरके पानी लाना= मतलब बहुत गहराई से पानी लाना।
3. लच्चीडारी –बच्चों मे एक दूसरे को पकडने का खेल होता था। ऐसा खेल पेड पर चढकर भी होता था जिसे लच्चीडारी कहते है।
4. फरेन्दा= पूरब मे जामुन बहुत बड़ा होता था जिसे फरेन्दा कहते है।
5. पौडना का अर्थ है= तैरना
6. पाताल तोड/चन्द्रफोड का अर्थ है– चन्द्रमा से भी ऊँचा।
7. आम के पने को बिस्कोहर में अमझौरा कहते है यानि आम का रसा।
8. पायक– यानि हुसन हुसैन की सेना के पैदल सिपाही।
9. मुँडकटवा= बिना सिर के लेटी हुए मिट्टी की मानव प्रतिमा।
10. दीवाली को= यक्ष रात्रि भी कहते थे।
11. पुरइन= कमल पत्र को कहते है। कमल के नाल को भसीण कहते है।
12. कथरी सुजनी= सुई को डोरी से बनी हुई कथरी सुजनी कहलाती है।
13. बरहा= खेतो में पानी देने कें लिए बनी छोटी–छोटी नालियों को बरहा कहते है।
14. कुकुआ= बिसनाथ अपने पुरूष अंग को कुकुआ कहते थें।
15. मेहरा= स्त्रियोचित व्यवहार करने वाले पुरूषों को मेहरा कहा जाता है।
16. मिजाजी= बड़ा रोब रखने वाला।
17. गेहुँअन= ऐसा साँप जिसे शहर में कोबरा कहा जाता है।
18. टिपनी= अदला बदली
19. डंडीमारना= दुकान पर तराजू से तोलने का काम ।
20. भगुई/भगुआ= जो सिर्फ फटी हुई धौती पहनते थे, फटी धौती को भगुआ/भगुई।
21. पाही= अपने गाँव से दूर जो खेती होती है उसे पाही कहते है।
22. दुआर= जमीदार के घर को दुआर कहते है।
23. मरकहवा= यानी बहुत मारने वाला
24. मफहूम माने भावार्थ
25. आग= गाँव में लोग खुले मे टट्टी कर देते है वह पडी रहती है और सूख जाती है उसको आग कहते है।
26. पतरका= पतली शरीर वाली
27. अब कंसा का राज है जिसे गर्भपात कहा जाता है।
28. अड़ब्द यानी बन्द हो जाना
29. उचकुन= बटुली को चूल्हे पर ठीक से स्थापित करने के लिये चूल्हे के ऊपर जो छोटी–छोटी गिटियॉ लगा दी जाती है। उसे उचकुन कहते है। लेकिन बिस्कोहर में यह अलग अर्थ में प्रचलित था यानि लोग अपने यार मित्रों के लिये जब आत्मीयता प्रकट करते थे, एक दूसरे का हाल चाल जानने के लिए इस शब्द का प्रयोग करते थे। का हो उचकुन का हाल है।
30. आज तो बहुत खुरस रहे हो= आज तो बहुत सुन्दर दिख रहे हो।
31. नतगुण= किसी को बेवकुफ, उल्लू या हीन बताने के लिये यह विशेषण दिया जाता था।
32. महगुँआ= ऐसा आदमी जिसकी हैसियत ज्यादा नहीं लेकिन हर वक्त फैशन किए घूमता है। उसे महगुँआ कहते थे।
33. ढाई सवा पाँच या पोने आठ= ऐसे लड़कों को कहा जाता है जो लड़कियो जैसे लगते है।
34. सात सही तीन बटा चार= ऐसे लड़को को कहते थे जो अंग्रेजी पढ़ कर आते थे।

अब बिस्कोहर लोक भाषा (पूर्वी अवधी) देखते है– ''सारे दुनियाभर के लुगाड़े इकठ्ठा होय गए है भगौ सारे–अब्बै दुइ दुइ डंग चूतरै पै लगावैगे सारी भूसी छूट जाएगी। दीया बाती का बखत ओई रमा रमौझा – – – भगों सारे, हियाँ का घरा है कटहर? बिना लाढी के सारन के चूतरभब्भात है ऐसा भए है कलयुगी सारे[11]

''तौहार पढाई तो भग्गो पतुरिया क तौ का होय गया– खतमै नहीं होत''

''हम गैयक दूध नाहीं पियब, अम्मक दूध पियब – – – तौर दूध खराब है, हमई नाहीं पियब रै''

बिस्कोहर में प्रचलित लोकोक्तियां= 1.''घर माँ भूजी भाँग नहीं कुकुर पादे चिउरा'' =जब कोई गरीब आदमी बढ़ चढ़ के कर बाते करता था तो उसे कहा जाता था। अर्थात् घर में पत्ता भर भाग भी नहीं है या कुछ भी नहीं है।

कुकुर पादे चिउरा – सुक्ष्म को स्थूल बनाने की प्रकिया है।

2.''ससुर केतना जने हुआँ जौन बैठे है, एक जने घाट करे सौ जने करिहॉव हिलावै[12]

= इसका अर्थ है कि एक आदमी तो रतिक्रिया कर रहा है और सौ लोग वहॉ बैठकर अपनी कमर हिला रहे है।

3.बिस्कोहर मे हर जात की निंदा और प्रशंसा में पद्य उक्तियाँ मौजूद थीं–

मटकीय दाना, सूद उताना
अन्न न मिलै तब सतुआ खाए
मनई न मिले तब अहिर से बतुआए
कायथ औ खटकीरा, इनके मारै न तनिकौ पीरा।
बनिया बक्काल, हमरे क दाल।
न सौ मसाला न एक धनिया,
न सौ बांभन न एक बनिया
बांभन मुस्लिम भाई–भाई,

ठाकुर कौम कहाँ से आई।

एक अगुवा बिना सौ जोलाहा डूबि गए[13]

मुहावरा–पुलकित या हर्षित होने के अर्थ में एक मुहावरा प्रचलित था–

''बस तू आवत रहौ और सकूर तूझसे कहिन कि खैनी खाइ जाओ तो खुसी के आरे तुहार गाँड़ कटोरा होइ गई''[12]

डॉ. रामचन्द्र त्रिवारी ''नंगातलाई का गॉव'' के बारे में कहते है कि– ''डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी एक प्रगतिशील आलोचक के रूप में ख्यात है। वस्तुतः उन्होने इसमें बिस्कोहर (लेखक का गाँव) के बहाने समय के साथ ढ़ेढ़ ग्रामीण जीवन में होने वाले परिवर्तनों को एक आलोचक की दृष्टि से अंकित किया है''[14]

अध्ययन का उद्देश्य

लोक भाषा में लोकगीतों का अर्थ समझते हुए अवध क्षेत्र में प्रचलित विशेष लोक गीत व लोक भाषा की यात्रा करते हुए लोक को समझना तथा अवध क्षेत्र की विशेष लोक शब्दावली वह लोकगीतों से परिचित होना तथा उस क्षेत्र विशेष की लोक संस्कृति की पहचान करना तथा अन्य क्षेत्रों से तुलनात्मक अध्ययन करना ।

निष्कर्ष

इस प्रकार सांराश रूप में कहा जा सकता है कि लोकगीत व लोकभाषा एक क्षेत्र विशेष की लोक संस्कृति से परिचित करवाते है। लोकगीत, लोकभाषा, खानपान, वेशभूषा एक क्षेत्र विशेष की लोक संस्कृति को दूसरे क्षेत्र विशेष की लोकसंस्कृति से अलग करते है। विविधता में एकता ही लोक की महत्वपूर्ण विशेषता है। ''नंगातालाई का गाँव'' आये विशेष लोकगीत मरसिया, दाहा अवधी संस्कृति की पहचान बताते है। इसी प्रकार लोकभाषा में विशेष क्षेत्रीय शब्दावली से परिचित होते है जो उस क्षेत्र विशेष को अन्य क्षेत्रो से अलग करती है।

अंत टिप्पणी

1. *सत्येन्द्र डॉ. लोक साहित्य विज्ञान, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर, प्रथम संस्करण 1962, तृतीय संस्करण 2017, पृष्ठ 15*
2. *सत्येन्द्र, डॉ, लोक साहित्य विज्ञान, राजस्थानी ग्रंथागार जोधपुर प्रथम संस्करण 1962, तृतीय संस्करण 2017 पृष्ठ 315*
3. *सत्येन्द्र, डॉ. लोकसाहित्य विज्ञान पृष्ठ 318–321*
4. *त्रिपाठी, विश्वनाथ, राजकमल पेपर बैक्स, में पहला संस्करण 2012, भूमिका से।*
5. *वही पृष्ठ 42*
6. *वही पृष्ठ 25*
7. *वही पृष्ठ 103–104*
8. *संपादक नगेन्द्र, डॉ, हिन्दी साहित्य का इतिहास, मयूर पेपर बैक्स नोएडा, प्रथम संस्करण 1973, 34वाँ संस्करण 2013 पृष्ठ 848*
9. *त्रिपाठी, विश्वनाथ, नंगातलाई का गाँव पृष्ठ 117*
10. *वही पृष्ठ 114*
11. *वही पृष्ठ 28*
12. *वही पृष्ठ 115*
13. *वही पृष्ठ 75*
14. *तिवारी, रामचन्द्र, डॉ.– हिन्दी का गद्य साहित्य, विश्व विद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण 1955 ई. , 10वाँ संस्करण 2015 पृष्ठ 547।*